RNI No. 26281/74 रजि. नं. पी.बी./जे.एल–011/2018-20

ओ३म्
कृण्वन्तो विश्वमार्यम्
साप्ताहिक

आर्य मर्यादा

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का प्रमुख पत्र

वर्षः 75, अंक : 19 एक प्रति 2 : रुपये
रविवार 22 जुलाई, 2018
विक्रमी सम्वत् 2075, सृष्टि सम्वत् 1960853119
दयानन्दाब्द : 194 वार्षिक शुल्क : 100 रुपये
आजीवन शुल्क : 1000 रुपये

दूरभाष : 0181-2292926, 5062726
E-mail: apspunjab2010@gmail.com,
www.aryapratinidhisabha.org

19 JUL 2018

वर्ष–75, अंक : 19, 19-22 जुलाई 2018 तदनुसार 7 श्रावण सम्वत् 2075 मूल्य 2 रु०, वार्षिक 100 रु० आजीवन 1000 रु०

षड्रिपुदमन

ले०–स्वामी वेदानन्द (दयानन्द) तीर्थ

उलूकयातुं शुशुलुकयातुं जहि श्वयातुमुत कोकयातुम्।
सुपर्णयातुमुत गृध्रयातुं दृषदेव प्र मृण रक्ष इन्द्र।।
–अथर्व० ८।४।२२

शब्दार्थ–उलूकयातुम् = उल्लू की चाल को **शुशुलूकयातुम्** = भेड़िये की चाल को **श्वयातुम्** = कुत्ते की चाल को **उत** = और **कोकयातुम्** = चिड़े की चाल को **सुपर्णयातुम्** = गरुड़ की चाल को **उत** = और **गृध्रयातुम्** = गिद्ध की चाल को **जहि** = नाश कर, त्याग दे। हे **इन्द्र** = ऐश्वर्याभिलाषी आत्मन्! **रक्षः** = राक्षस को **दृषदा+इव+प्र+मृण** = मानो पत्थर से, पत्थर-समान कठोर साधन से मसल दे।

व्याख्या–योगिजन कामक्रोधादि विकारों को पशु-पक्षियों से उपमा देते हैं। उनका यह व्यवहार इस मन्त्र के आधार पर है। **उलूक** = उल्लू अन्धकार से प्रसन्न होता है। अन्धकार और मोह एक वस्तु है। मूढ़जन मोह के कारण अज्ञानान्धकार में निमग्न रहना पसन्द करते हैं। उलूकयातु का सीधा-सादा अर्थ हुआ मोह। मोह सब पापों का मूल है। वात्स्यायन ऋषि ने लिखा है–**मोहः पापीयान्** = मोह सबसे बुरा है, राग-द्वेषादि इसी से उत्पन्न होते हैं।

शुशुलूक–भेड़िया। मोह से राग-द्वेष उत्पन्न होता है। भेड़िया क्रूर होता है, बहुत द्वेषी होता है। शुशुलूकयातुम् का भाव हुआ द्वेष की भावना। द्वेषी मनुष्य में क्रोध की मात्रा बहुत होती है।

श्वान = कुत्ता। कुत्ते में स्वजातिद्रोह तथा चाटुकारिता बहुत अधिक मात्रा में होती है। स्वजाति-द्रोह द्वेष का ही एक रूप है और मत्सर = जलन के कारण होता है। दूसरे की उन्नति न सह सकना मत्सर है। चाटुकारिता लोभ के कारण होती है। लोभ राग के कारण हुआ करता है। श्वयातु का अभिप्राय हुआ–मत्सरयुक्त लोभवृत्ति। लोभवृत्ति की जब पूर्ति नहीं होती, तो मत्सर और क्रोध उत्पन्न होते हैं।

कोक = चिड़ा। चिड़ा बहुत कामातुर होता है, कोक का अर्थ हंस भी होता है। हंस भी बहुत कामी प्रसिद्ध है। कोकयातु का तात्पर्य हुआ कामवासना।

सुपर्ण = सुन्दर परोंवाला गरुड़। गरुड़ पक्षी को अपने सौन्दर्य का बहुत अभिमान होता है। सुपर्णयातु का भाव हुआ–अहङ्कार-वृत्ति-मन।

गृध्र = गिद्ध। गिद्ध बहुत लालची होता है। गृध्रयातुम् का भाव हुआ लोभवृत्ति।

वेद ने इन सबका एक नाम रक्षः = राक्षस रखा है, अर्थात् मोह, क्रोध, मत्सर, काम, मद और लोभ राक्षस हैं। राक्षस या रक्षस् शब्द का अर्थ है–जिससे अपनी रक्षा की जाए, अपने-आपको बचाया जाए। मोह आदि आत्मा के शत्रु हैं। इनको मार देना चाहिए। जिसे आध्यात्मिक या लौकिक किसी भी प्रकार के ऐश्वर्य की कामना हो, वह इन राक्षसों को मसल दे। मोह आदि में से एक-एक ही बहुत प्रबल एवं प्रचण्ड होता है। यदि किसी मनुष्य पर ये छहों एक साथ आक्रमण कर दें, तो उसकी क्या अवस्था होगी ? अतः मनुष्य को सदा सावधान एवं जागरूक रहना चाहिए और इनको नष्ट करना चाहिए–**'प्राक्तो अपाक्तो अधरादुदक्तोऽभि जहि रक्षसः पर्वतेन'** [अथर्व० ८।४।१९] = आगे से, पीछे से, नीचे से, ऊपर से, सब ओर से राक्षसों को वज्र से मार दे, अर्थात् दुष्टवृत्तियों का सर्वथा सफाया कर दे। **(स्वाध्याय संदोह से साभार)**

आ सूर्ये न रश्मयो ध्रुवासो वैश्वानरे दधिरेऽग्रा वसूनि।
या पर्वतेष्वोषधीष्वप्सु या मानुषेष्वसि तस्य राजा।।
–ऋ० १.५९.३

भावार्थ–हे परमात्मन्! जो धन महातेजस्वी अग्नि में, पर्वतों में, औषधीवर्ग में, समुद्रादि जलों में और मनुष्यों के खजाने आदिक में स्थित है, उस सब धन के आप ही स्वामी हैं। जैसे सूर्य में किरणें अटल होकर रहती हैं ऐसे संसार से सब धन, आप में स्थिर होकर रहते हैं। भगवन्! आप कंगाल को एक क्षण में धनी और धनी को कंगाल बना सकते हैं।

देवो देवानामसि मित्रो अद्भुतो वसुर्वसूनामसि चारुरध्वरे।
शर्मन्त्स्याम तव सप्रथस्तमेऽग्ने सख्ये मा रिषामा वयं तव।।
–ऋ० १.९४.१३

भावार्थ–हे सर्वज्ञ सर्वन्तर्यामी प्रभो ! आप विद्वान् पुरुषों के महाविद्वान् और आश्चर्यकारक सुखदायक सच्चे मित्र हो। लाखों प्राणियों के आधाररूप जो पृथिवी आदि वसु हैं, उन वसुओं के अधिष्ठानरूप आप वसु हो। भगवन्! आप ज्ञान यज्ञादि उत्तम कर्मों में शोभायमान, धार्मिक और ज्ञानी पुरुषों को शोभा देने वाले हो। आपकी मित्रता सदा आनन्ददायक है। आपकी मित्रता में स्थिर रहते हुए, हम कभी दुःखी नहीं हो सकते। कृपानिधे! हम यही चाहते हैं कि, हम आपको ही सच्चा सुखदायक मित्र जानकर आपकी प्रेम भक्ति में लगे रहें।

इळा सरस्वती मही तिस्रो देवीर्मयोभुवः।
बर्हिः सीदन्त्वस्रिधः।। –ऋ० १.१३.९

भावार्थ–प्रभु से प्रार्थना है कि हे दयामय परमात्मन्! हमारे देशवासियों में इन तीन देवियों की भक्ति हो। १. इडा अपनी मातृभाषा-भाषियों के साथ मातृभाषा में बातचीत करना। २. लोक, परलोक, जड़, चेतन, पुण्य, पाप, हित, अहित, कर्तव्य, अकर्तव्य को बताने वाली सच्ची विद्या सरस्वती। ३. मही अपनी जन्मभूमि के वासी अपने बान्धवों से प्रेम। ये तीन देवियाँ मनुष्य को सदा सुख देने वाली हैं, कभी हानि करने वाली नहीं हैं। हर एक मनुष्य के अन्तः करण में, तीनों देवियों के प्रति भक्ति होनी चाहिए। जिस देश के वासियों की इन तीन देवियों में प्रीति होगी, वह देश उन्नत होगा। जिस देश में इन तीन देवियों में भक्ति नहीं है, जिनका अपनी भाषा और विद्या से प्रेम नहीं, अपनी मातृभूमि और मातृभूमि में बसने वालों से प्रेम नहीं, वह देश अवनति के गढ़े में पड़ा रहेगा।

जीवनोपयोगी श्रीमद्भगवद्गीता

ले.-डा. निर्मल कौशिक कर्मशील संस्कृत विकास मंच, फरीदकोट

श्रीमद्भगवद्गीता विश्व विख्यात ग्रन्थ है। जीवन को सुचारू रूप से चलाने तथा इहलोक और परलोक में सन्मार्ग प्रदर्शित करने में श्रीमद्भगवद्गीता ने अहम् भूमिका निभाई है। भगवान श्री कृष्ण ने पावन गीता रूपी अमृतमयी ग्रन्थ को जन सामान्य के समक्ष प्रस्तुत कर समस्त मानव जाति के कल्याण का मार्ग प्रशस्त किया है। उनके अर्जुन को दिए गए इस उपदेश के माध्यम से व्यावहारिक जीवन में जीने की कला का सुज्ञान तो होता ही है साथ ही पारलौकिक जीवन भी धन्य होता है। गीता जी को गांधी जी ने अपनी माता और आपात काल में सहारा बताया है। लोकमान्य तिलक ने 'श्रीमद्भगवद्गीता रहस्य' नामक गीता का भाष्य लिखा। गीता जीवन का शास्त्र है। पश्चिमी देशों में गीता का अंग्रेजी अनुवाद अत्यन्त लोकप्रिय है। वे लोग गीता जी पर शोध कार्य कर रहे हैं। जिस प्रकार हमारे देश में स्वामी विवेकानन्द, अरविन्द घोष, डा. राधा कृष्णन, लोकमान्य तिलक, विनोबा भावे, आदि मनीषियों ने इसका अध्ययन कर अपने जीवन को साधा और अन्य लोगों को इसे धारण करने की प्रेरणा दी इसी प्रकार पश्चिमी विद्वान डा. मैक्समूलर, डा. पाल डायसन, जोन डैविट थोरोराल्फ वाल्डो, इमरसन आदि अनेक विद्वानों ने भी अपने जीवन में गीता जी को समावेशित कर स्वयं को कृत्कृत्य किया।

श्रीमद्भगवद्गीता में हर जिज्ञासा और निराशा का समाधान है। उसमें विविध विषयों का समावेश है। उसमें मृत्यु के भयावह आतंक से मुक्ति दिलाने का अमरतत्व विद्यमान हैं। यहीं कारण है कि गीता जी को हर वर्ग, हर जाति, हर देश ने प्रत्येक काल में सम्मानित दृष्टि से देखा है और इसका आश्रय ग्रहण कर मन में अपार शान्ति का अनुभव किया है।

जिस प्रकार मिश्री सब और से मीठी होती है इसी प्रकार गीता जी भी सभी प्रथा से आनन्द ही देती हैं।

सामान्य लोगों में एक मिथ्या अवधारणा है कि श्रीमद्भगवद्गीता केवल हिन्दुओं का ग्रन्थ है। जब गीता का उच्चारण भगवान श्री कृष्ण ने किया था उस समय सिक्ख, ईसाई, जैन, बौद्ध आदि थे ही नहीं। किसी भी वेद पुराण, उपनिषद में ऐसा कोई संकेत नहीं मिलता। यह समूह मानव जाति का उद्धारक ग्रन्थ भारत के दार्शनिक व धार्मिक साहित्य में गीता जी का विशिष्ट महत्त्व है। संस्कृत भाषा में भगवान श्रीकृष्ण द्वारा अर्जुन को युद्धस्थल में कौरवों और पाण्डवों की सेवा का मध्य दिया गया यह उपदेश स्वतन्त्र ग्रन्थ न होकर महर्षि वेदव्यास जी द्वारा प्रणीत महाभारत के भीष्म पर्व का एक अंश है जिसमें 18 अध्याय और 700 श्लोक है। इसमें जीवन के अनेक महत्त्वपूर्ण पहलुओं और पक्षों पर प्रकाश डाला गया है। इसका अध्ययन कर हम अपने जीवन को सहज ढंग से जीने और जीवन की कठिनाइयों पर विजय पाने में सहायक होते है।

कर्मव्येवाधि कारस्ते मा कलेषु कदाचन।।
मा कर्म फल हेतु भूर्मा ते संगोऽस्तव कर्मणि।।2147।।

मानव सबसे अधिक मृत्यु से भयभीत होता है।

इस भय को दूर करने के लिए भगवान कृष्ण ने गीता में शरीर की नश्वरता और आत्मा की अमरता का सन्देश दिया हैं। उन्होंने कहा है कि जिस प्रकार हम जीर्ण वस्त्रों को त्याग कर नए वस्त्र धारण करते है ठीक उसी प्रकार आत्मा मृत्युपरान्त नया शरीर (जीवन) धारण करती है अत: आत्मा नश्वर है और शरीर नाशवान्

वासांसि जीर्णानि यथा विताय नवानि गृहगाति नरोपराणि
तथा शरीराणि विहाय जीर्णा न्यन्यानि संयाति नवानि देही
नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः।।2/22।।
न चैनं कलेदयान्त्यापो न शोषयति मारुतः।।2/23।।

कर्म बताते हुए यज्ञ के महत्त्व को स्पष्ट किया है।

यज्ञ क्यों करना चाहिए, इसके विषय में उन्होंने तर्क भी दिया है कि इस सृष्टि करने के लिए अन्त का विशिष्टि महत्त्व है पूरी सृष्टि अन्त और जल से पोषित है। अत: प्रत्येक मनुष्य को यज्ञ कर्म करना चाहिए। यज्ञ में ही उस ब्रह्म का वास है।

भवति भूतानि पर्जन्यादन्न सम्भवः।
यज्ञाद्भवति पर्जन्यो यज्ञः कर्म समुद्भवः।।
कर्म ब्रह्मोहभव विद्धि ब्रह्माक्षर समुद्भवम्।
तस्मात् सर्वमतम् ब्रह्म नित्यं यज्ञे प्रतिष्ठितम्।।3/14-15

धर्म के विषय में श्री गीता जी में स्वधर्म को श्रेष्ठ बताया गया है। पर धर्म को भय देने वाला कहा गया अपने धर्म में मरना भी श्रेयस्कर है। पंजाब का इतिहास इस बात का साक्षी है कि अपना धर्म छोड़ने की अपेक्षा गुरुओं ने सिर कटवाना उचित समझा और धर्म की रक्षा के लिए सर्वस्व बलिदान कर दिया।

श्रेयान् स्वधमौ विगुणः परधर्मा स्वनुष्ठितात् स्वधर्मै मिधगं श्रेय पर धर्मो भयावहः।।3/35

क्रोध और आवेश मनुष्य की बुद्धि को भ्रष्ट और नष्ट कर देता है। यह बात गीता में बहुत सटीक ढंग से समझाई गई है अत: मनुष्य को क्रोध नहीं करना चाहिए। क्रोध से जीवन नरक बन जाता है।

क्रोधात् भवति संमोहा संमोहात् स्मृति विभ्रमः
स्मृति भ्रंशाद बुद्धिर्नाशो, बुद्धिनाशात्प्रणश्यति।।2/63

दु:ख और सुख में समान अवस्था में रहने वाला पुरुष धैर्यवान् कहलाता है इसे गीता में स्थित प्रज्ञ कहा गया है। सिद्धि-असिद्धि, मानापमान निन्दा स्तुति, लाभ-हानि, सुख-दु:ख को समान जानकर जो व्यक्ति जीवन यापन करता है वह जो भी कर्म करता है वह पाप से मुक्त हो जाता है।

सुख दुखे समेकृत्वा लाभालाभ जयाजयो
ततो युद्धाय युज्यस्व नैवपाप-मृवाप्स्यसि।।2/38।।

आसक्ति रहित होकर, निर्लेप रहकर कर्म करना और फल की इच्छा न करना। सदैव सम स्थिति में रहना। सफलता असफलता को समान भाव से देखना ही गीता का समत्वयोग है।

योगस्थ कुरु कर्मणि सगें त्यक्त्वा धनंञ्जय सिद्धयसिद्धियों समो भूत्वा समत्वंयोग उच्यते।।
2/48

दुखेषवनुद्विग्नमना सुखेषु विगत स्पृहः।
वीत राग भय क्रोधः स्थित धीर्मु निरुच्यते।।2/56

समत्व योग से मनुष्य स्थित प्रज्ञ हो जाता है।

भगवान इस सृष्टि के कण-कण में विद्यमान है वह निराकार स्वरूप है निर्गुण ब्रह्म है। लेकिन कभी-कभी किसी उद्देश्य से वह सगुण रूप धारण कर अवतरित होता है। गीता में भगवान कृष्ण ने इस सृष्टि पर अवतरित होने के तीन उद्देश्य बताए है। दुर्जनों का नाश-सज्जनों की रक्षा और धर्म की स्थापना। इसी से मानव जीवन की सुरक्षा होती है। अत: हमें ईश्वर का स्मरण करना चाहिए।

परित्राणाय साधुनां, विनाशाय च दुष्कृताम्
धर्म संस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे-युगे

अपने जीवन को समाजोपयोगी बनाने के लिए मनुष्य को मानवीय गुणों एवं जीवन मूल्यों से अलंकृत करना चाहिए। इसके लिए उसे सद्गुणी और चरित्रवान् होना चाहिए ताकि लोग उसका अनुसरण कर स्वयं को चरित्रवान बना सके क्योंकि श्रेष्ठ पुरुषों द्वारा किया गया आचरण ही समाज में प्रमाण बन जाता है।

यद्दाचरति श्रेष्ठतत् देवेतरो जना:
सः यत्प्रमाणं कुरूते लोकस्त-दनुवर्तते।।3/21

मानव जीवन में जो भी कर्म करो समर्पण भाव से करो। समर्पण भाव से किया गया कार्य व्यक्ति और समाज दोनों के लिए श्रेयस्कर होता है। इसी प्रकार ईश्वर के प्रति समर्पण भाव भी इहलोक और परलोक में श्रेयस्कर होता है। गीता में भगवान कृष्ण ने स्वयं कहा है।

इस प्रकार हम देखते है कि मनुष्य के जीवन में हर कदम पर गीता जी हमारा मार्ग दर्शन करती है। अत: गीता जी हमारे लिए एक जीवनोपयोगी ग्रन्थ है।

सम्पादकीय

वीर बलिदानी-चन्द्रशेखर आजाद

भारत भूमि धन्य है जहां पर अपनी मातृभूमि की रक्षा के लिए हर नागरिक अपना बलिदान देने को तैयार रहता है। श्रीकृष्ण महाराज ने गीता में कहा है कि-स्वधर्मे निधनं श्रेय: परधर्मो भयावह: ।। अपने धर्म के लिए मृत्यु को भी प्राप्त हो जाना कल्याणकारी है, दूसरों का धर्म भय देने वाला होता है। वेद में कहा गया है कि- वयं राष्ट्र जागृयाम पुरोहित: अर्थात् हम इस राष्ट्र के जागरूक प्रहरी हैं। अथर्ववेद के भूमि सूक्त में मन्त्र आता है कि-माता भूमि पुत्रोऽहं पृथिव्या: वयं तुभ्यं बलिहृत: स्याम् अर्थात् यह भूमि मेरी माता है मैं इसका पुत्र हूँ। इसकी रक्षा के लिए हम अपना बलिदान देने को तत्पर रहें। जब हमारा देश गुलाम था उस समय भारत के नौजवानों में यही भाव अपनी मातृभमि के लिए भरे थे। भारतवर्ष को अंग्रेजों की गुलामी से आजाद कराने में अनेकों शूरवीरों तथा क्रान्तिकारियों का योगदान है जिन्होंने अपना तन-मन-धन और सर्वस्व इस देश की आजादी के लिए न्यौछावर कर दिया। अपने निजी सुखों को त्यागकर राष्ट्रहित के लिए अपने आप को समर्पित कर दिया। ऐसे शूरवीरों, क्रान्तिवीरों के कारण हमारा देश आजाद हुआ। ऐसे ही क्रान्तिकारियों में अमर शहीद चन्द्रशेखर का नाम बड़े सम्मान के साथ लिया जाता है। चन्द्रशेखर आजाद के नाम से अंग्रेज अधिकारी ड़र जाते थे। चन्द्रशेखर आजाद का जन्म वर्तमान मध्य प्रदेश के झाबुआ जिले के भावना ग्राम में 23 जुलाई 1909 को हुआ था। चन्द्रशेखर आजाद बचपन से ही वीर और साहसी थे। वे हमेशा सच बोलते थे। एक बार वे साधु के वेश में घूम रहे थे तो पुलिस वालों ने उन्हें पकड़ लिया और उनसे पूछताछ की जाने लगी। पुलिस वालों ने उनसे पूछा कि क्या तुम आजाद हो? इस पर चन्द्रशेखर आजाद ने बड़ी चतुराई से सच बोला कि अरे हम आजाद नहीं हैं तो क्या हैं? सभी साधु आजाद होते हैं। हम भी आजाद हैं।

इतना सच बोलने के बाद भी वे पुलिस के चंगुल से निकल गए। उन्होंने जीवन में एक ही सबक पढ़ा था कि गुलामी जिन्दगी की सबसे बड़ी बदकिस्मती है। जब उन्होंने क्रान्तिकारी जीवन में कदम रखा तो इनका साहस भरा कार्य काकोरी षड्यन्त्र था। 9 अगस्त 1925 को सहारनपुर से लखनऊ जाने वाली गाड़ी को काकोरी के पास रोक कर अंग्रेजी खजाना लूटने के पश्चात नौ दो ग्यारह हो गए थे। चाहे कई साथियों को बाद में पुलिस ने पकड़ कर फांसी की सजा दी थी पर आजाद आखिरी समय तक आजाद ही रहे थे। चन्द्रशेखर आजाद देशभक्ति के गीतों को बड़े चाव से सुना करते थे। चन्द्रशेखर आजाद आजीवन अविवाहित रहे। वे कहा करते थे कि अपने सिर पर मौत का कफन बांध कर चलने वाला व्यक्ति कभी शादी के बन्धन में बंधने की कल्पना भी नहीं कर सकता। आजाद ही नहीं उनके दल का हर एक सदस्य अपने घर बार को तिलांजलि देकर दल में शामिल हुआ था। जो व्यक्ति गुलामी की जंजीरों को तोड़ने का स्वप्न लेकर आया हो वह वैवाहिक सुख की कल्पना भी कैसे कर सकता है। एक बार उनके दल के किसी सदस्य ने आजाद से पूछ लिया कि वे कैसी पत्नी की इच्छा करते हैं तो आजाद ने बड़े ही सहज भाव से उत्तर दिया कि मेरे अनुसार मेरे लायक लड़की हिन्दुस्तान में तो क्या, सारी दुनिया में कहीं नहीं मिलेगी क्योंकि मैं ऐसी पत्नी चाहता हूं जो एक कन्धे पर राईफल और दूसरे कन्धे पर कारतूसों से भरा हुआ बोरा उठाकर पहाड़ से पहाड़ घूमती रहे और इस तरह आजादी के लिए अपनी जान दे दे।

27 फरवरी 1931 को वह महान् दिन था जिस दिन आजाद ने अपने जीवन से आजादी पाई थी। वे अक्सर कहा करते थे कि किसी मां ने अभी वो लाल पैदा ही नहीं किया जो आजाद को जीवित पकड़ सके। उन्होंने कसम खाई थी कि वे कभी पुलिस के हाथों जिंदा गिरफ्तार नहीं होंगे। इसी कसम को निभाते हुए वे शहीद हुए थे। प्रयाग के अलफ्रेड पार्क में वे अपने साथी के साथ बैठकर कोई महत्वपूर्ण चर्चा कर रहे थे कि उनके एक साथी ने विश्वासघात करते हुए पुलिस को सूचना दे दी। पुलिस ने चारों ओर से घेर लिया। आजाद ने बड़ी वीरता से सामना किया। दोनों ओर से गोलियों की बौछार होने लगी लेकिन आजाद कब हार मानने वाले थे। उन्होंने अपनी पिस्तौल से निशाना साधकर सी. आई. डी. के सुपरिटेंडेंट की भुजा पर गोली मारकर उसे नकारा कर दिया। इसी प्रकार एक इंस्पैक्टर का जबड़ा भी उड़ा दिया।

अचानक उन्हें ज्ञात हुआ कि उनके पिस्तौल में एक ही गोली बची है। वे अजीब संकट में फंस गए। उन्हें अपनी कसम बार-बार याद आने लगी कि जिन्दा रहते हुए पुलिस के आदमी मुझे कभी हाथ नहीं लगाएंगे। उन्होंने अपनी कनपटी पर पिस्तौल की नाल लगाकर घोड़ा दबा दिया और आत्म बलिदान का गौरव प्राप्त किया। उनके शव को देखकर भी पुलिस वालों को यकीन नहीं हो रहा था कि वे मर गए हैं। आजाद से भयभीत पुलिस वाले उनके शव को गोलियां मारते रहे। ऐसे निर्भीक और तेजस्वी थे अमर शहीद चन्द्रशेखर आजाद जिन्होंने मरते दम तक अपनी कसमों को निभाया और जीते जी अंग्रेजों के हाथ नहीं आए।

आज के युवा वर्ग को ऐसे क्रान्तिकारियों के जीवन से शिक्षा लेकर निर्भीक, ओजस्वी और बलवान बनना चाहिए। नशे के कारण जो अपनी जवानी को बर्बाद कर देते हैं वे कभी भी जीवन में उन्नति नहीं कर सकते। अपने यौवन को बर्बाद न करके उसे राष्ट्रहित के कार्य में लगाना चाहिए। चन्द्रशेखर आजाद जैसे कितने ही क्रान्किारियों ने अपनी भरी जवानी के सुखों को छोड़कर इस मार्ग को अपनाया। वे चाहते तो सुख का जीवन व्यतीत कर सकते थे परन्तु उनका लक्ष्य अपने देश को स्वतन्त्र देखना था। इसके लिए उन्होंने त्याग के रास्ते को अपनाया। अपने घर-बार और परिवार को त्याग करके उन्होंने अनेकों कष्ट सहे, कई-कई दिनों तक भूखे रहे परन्तु अपने लक्ष्य से एक क्षण के लिए भी विचलित नहीं हुए। इसलिए आज की युवा पीढ़ी को नशे जैसी बुरी आदतों से दूर रहकर अपनी जवानी का, अपनी ऊर्जा का, प्रयोग राष्ट्रहित के कार्यों के लिए करें।

23 जुलाई का दिन उस महान् बलिदानी चन्द्रशेखर की याद दिलाता है जिसका जन्म ही इस देश पर बलिदान होने के लिए हुआ था। आज की युवा पीढ़ी की इन वीर शहीदों को अपना आदर्श और प्रेरणास्रोत मानना चाहिए जिन्होंने इस देश की आजादी के लिए अपना योगदान दिया है। आज अगर हमारा देश स्वतन्त्र है तो इसके पीछे उन बलिदानियों का बलिदान है। आज की युवा पीढ़ी को नशे से दूर रहकर अपनी शारीरिक और आत्मिक उन्नति करने का प्रयास करना चाहिए। नशे के प्रवाह में बहकर अपनी जवानी को बर्बाद करने के बजाय उसका उपयोग राष्ट्रहित के कार्यों में करना चाहिए।

प्रेम भारद्वाज
संपादक एवं सभा महामन्त्री

आर्य मर्यादा साप्ताहिक में विज्ञापन देकर लाभ उठाएं।

वेद में प्रसन्नता के उपाय

ले.-डॉ. अशोक आर्य १०४ शिप्रा अपार्टमेन्ट, कौशाम्बी २०१०१० गाजियाबाद

मानव सुखी तब ही रह सकता है, जब उसका मन उत्तम हो, जब वह प्रसन्न रहे, सुखों की उस पर सदा वर्षा होती रहे। इसके लिए यह आवश्यक है कि वह भौतिक सुखों की ओर न भाग कर वास्तविक सुख के साधनों को ग्रहण करने का संयोजन का प्रयत्न करता रहे। इस सम्बन्ध में ऋग्वेद का यह मन्त्र खुले स्वर से हमारा मार्गदर्शन करते हुए उपदेश कर रहा है कि :

विश्वदानीं सुमनसः स्याम पश्येम नु सूर्यमुच्चरन्तम।

तथा करद्वसुपतिर्वसूनां देवाँ ओहानाऽवसागमिष्ठ।। ऋग्वेद ६.५२।५।।

मन्त्र उपदेश करते हुए हमारा मार्गदर्शन कर रहा है और कह रहा है कि हम सदा उत्तम मन वाले हों तथा सदा प्रसन्न रहने वाले हों। यहाँ मन्त्र कह रहा है कि प्रसन्न रहने की औषध है उत्तम मन। जिसका मन उत्तम है, भौतिक क्रियाओं से बचा हुआ है, कभी किसी का बुरा करने का सोचता नहीं है, बुराइयों से बचा हुआ है, उसे कभी कोई कष्ट क्लेश नहीं घेर सकता।

इसलिए इस प्रकार का व्यक्ति सुखी होता है प्रसन्न होता है। निराशा उत्तम मन वाले प्राणी को कभी छू भी नहीं सकती। इसलिए हे मानव! तू उत्तम मन वाला बन कर सदा प्रसन्न रह।

मन्त्र आगे कहता है कि हम ज्ञान रूपी सूर्य को सदा उदित होते हुए देखें। हम जानते हैं कि सब क्रियाओं का मूल ज्ञान है और मन्त्र इस ज्ञान को सदा अपने अन्दर उदय होने का उपदेश कर रहा है। जब हम वेद रूपी ज्ञान का सूर्य अपने अन्दर उदय कर पाने में सक्षम होंगे तो हम उत्तम प्रसन्न रह सकेंगे अति प्रसन्न रह सकेंगे।

मन्त्र हमें परमपिता परमात्मा की सदा प्रार्थना करने का उपदेश दे रहा है और कह रहा है कि वह प्रभु सब प्रकार के ऐश्वर्यों का स्वामी है। पृथिवी आदि जितनी भी वस्तुएं हमें दिखाई दे रही हैं, उन सब का आधार भी वह प्रभु ही है। इस कारण ही हमारा अस्तित्व है। यदि यह न हो तो हमारा अस्तित्व ही संभव नहीं है। इस सब के होने से ही हमारी प्रसन्नता संभव हो पाती है। इसलिए हम सदा उस प्रभु की सेवा में ही रहें।

हम उस सर्वशक्तिमान प्रभु से यह भी प्रार्थना करें कि हे पिता ! आप दिव्य गुणों की वर्षा करने वाले हैं। ऐसी कृपा करें कि हम भी इन दिव्य गुणों को ग्रहण कर पावें। इतना ही नहीं आप हमें सदा विद्वान लोगों का सत्संग भी कराते रहें ताकि हम उनसे भी ज्ञान प्राप्त कर सकें। आप सब के रक्षक हो, आप के चरणों में रहते हुए हम भी सदा आप से रक्षित होते रहें।

इस प्रकार सार रूप में उपदेश देते हुए यह मन्त्र एक स्पष्ट तथा बड़ा ही सरल सन्देश दे रहा है कि :

१. हम अपने मन में सदा उत्तम विचार रखें

२. हम सदा प्रसन्न रहें

वेद ने हमें यह आदेश क्यों दिया है ? स्पष्ट है कि उत्तम विचारों वाला मन ही सुख, शांति तथा धन ऐश्वर्य की प्राप्ति का साधन है। यही प्रसन्नता का साधन है। एक प्रसन्न रहनेवाला व्यक्ति कभी दुःखी नहीं हो सकता। जब मन के अन्दर असत्य, ईर्ष्या, द्वेष, छल कपट सरीखे विचार जब तक मन में रहेंगे तब तक वह लड़ाई झगड़ा, कलह व कलेश में उलझा रहेगा। मन में कभी शान्ति न आ पावेगी। अशांत मन कभी भी उत्तम नहीं हो सकता। जब मन में बुराइयां भर रखी हैं तो वहां अच्छे विचारों के लिए स्थान ही नहीं रहता। इसलिए मन से यह बुराइयां निकाल कर उत्तम विचारों के लिए स्थान खाली करें और अपने मन को उत्तमता की और लगा कर उत्तम विचारों का प्रवेश करावें।

एक प्रसन्नता ऐसी भी होती है जिसे हम अज्ञान मूलक कह सकते हैं। इस प्रसन्नता का कारण हमारा अज्ञान होता है। जैसे अफीम, भांग, चरस, गांजा, शराब आदि अभक्ष्य पदार्थों आदि के सेवन से मानव कुछ समय के लिए अपनी चिंताओं से मुक्त हो जाता है किन्तु तो भी वह सच्ची प्रसन्नता नहीं पा सकते क्योंकि कुछ समय के पश्चात ही इन वस्तुओं का सेवन न केवल परिवार में बल्कि गली मोहल्ले में भी लड़ाई, झगड़े का कारण बन जाता है। अतः इस से प्रसन्नता के स्थान पर उसे कष्ट ही मिलता है, जब कि वेद तो ज्ञान मूलक प्रसन्नता प्राप्ति का उपदेश करता है। मन्त्र में कहा भी है कि ज्ञान के सूर्य को हम प्रतिदिन उदय होते हुए देखें। अर्थात् हम प्रातः बिस्तर छोड़ने से लेकर रात्रि को बिस्तर में आने तक निरंतर अपने ज्ञान को बढ़ाने का प्रयास करते हुए सच्चे अर्थों में प्रसन्नता प्राप्त करने के प्रयास में रहें। सूर्य परम पिता के विशेषनात्मक नामों में से एक है।

इससे इस मंत्रांश का यह भी भाव बनता है कि जो पिता सब का प्रकाशक है, हम उस परमपिता परमात्मा को अपने हृदय के आकाश में सब स्थानों पर अनुभव करें, उसकी सच्चे हृदय से प्रार्थना करते हुए आशा करें कि चाहे हम दुःख में हों या सुख में, हानि हो रही हो अथवा लाभ, विजयी हो रहे हों या पराजित, प्रत्येक अवस्था में हमारी यह प्रसन्नता बनी रहे।

वह प्रभु मंगलमय है, वह प्रभु आनंद देने वाला है, वह प्रभु सुख दायक है। उस प्रभु की कृपा को पाने के लिए, उस प्रभु की दया को पाने के लिए हमें सदा निरंतर अभ्यास करने की आवश्यकता होती है। निरंतर अभ्यास से, प्रभु के दिए गये वेद ज्ञान के निरंतर स्वाध्याय के बिना हम कुछ भी प्राप्त नहीं कर सकते। इसलिए हमें निरंतर, विशेष रूप से प्रतिदिन शुभ मुहूर्त से उठें तथा प्रभु के श्री चरणों में बैठ कर उसकी वाणी वेद का सदा स्वाध्याय करें। इससे ही हम विषाद रहित होकर प्रसन्न होंगे, सुखी होंगे।

जागो अब वैदिक विद्वानों

जागो अब वैदिक विद्वानों, मिलकर कदम बढ़ाओ, तुम वैदिक धर्म निभाओ
कहने का अब समय नहीं है, करके काम दिखाओ, तुम वैदिक धर्म निभाओं।
प्यारा आर्यवर्त हमारा, दुनिया में था नामी।
विद्या बल में, रण कौशल में, था वह जग का स्वामी।
सकल जगत का गुरु कभी था, जग को साफ बताओ, तुम वैदिक धर्म निभाओ।
कहने का अब समय नहीं है, करके काम दिखाओ, तुम वैदिक धर्म निभाओ।।1।।
गौतम, कपिल, कणाद जैमिनी, ऋषि महान यहां थे।
राम, कृष्ण, बलराम, भीम जैसे बलवान यहां थे।।
वीर विक्रमादित्य भोज की, गौरव गाथा गाओ, तुम वैदिक धर्म निभाओ।
कहने का अब समय नहीं है, करके काम दिखाओ, तुम वैदिक धर्म निभाओ।।2।।
ऋषियों को प्यारे भारत में पाप गया बढ़ भारी।
लाखों गऊएं बिन खता निशि दिन जाती हैं मारी।।
सांगा बन्दा, नलवा बन, दुष्टों के शीष अड़ओ, तुम वैदिक धर्म निभाओ।
कहने का अब समय नहीं है, करके काम दिखाओ, तुम वैदिक धर्म निभाओ।।3।।
देव भूमि भारत में फिरते हैं लाखों पाखण्डी।
भोली-भाली जनता को, ठगते हैं धूर्त उदण्डी।।
पोल खेल दो शैतानों की, लेखराम बन जाओ, तुम वैदिक धर्म निभाओ।
कहने का अब समय नहीं है, करके काम दिखाओ, तुम वैदिक धर्म निभाओ।।4।।
जड़ पूजा में लगे हुए हैं, भारत के नर-नारी।
युवक युवतियों पर हावी है, फैशन की बीमारी।।
मद्य, मांस पीते खाते हैं, मूढ़ों को समझाओ, तुम वैदिक धर्म निभाओ।
कहने का अब समय नहीं है, करके काम दिखाओ, तुम वैदिक धर्म निभाओ।।5।
श्रद्धानन्द, लाजपत जैसे, नहीं रहे अब नेता।
कुर्सी के हैं दास, स्वार्थी, बनते वीर विजेता।।
सत्य अहिंसा सदाचार का, इनको पाठ पढ़ाओ, तुम वैदिक धर्म निभाओ।
कहने का अब समय नहीं है, करके काम दिखाओ, तुम वैदिक धर्म निभाओ।।6।।
भारत स्वर्ग बनाना है तो, बात हमारी मानो।
सुख पाओगे हे मित्रो तुम, भला बुरा पहचानो।।
जगत गुरु ऋषि दयानन्द की, जय-जयकार मनाओ, तुम वैदिक धर्म निभाओ।
कहने का अब समय नहीं है, करके काम दिखाओ, तुम वैदिक धर्म निभाओ।।7।।
हो जीवन निर्माण दोस्तो, भले काम कर जाओ।
नन्द लाल 'निर्भय' तुम अपना जीवन सफल बनाओ।।
जगत पिता उस जगदीश्वर को कभी नहीं विसराओ, तुम वैदिक धर्म निभाओ।
कहने का अब समय नहीं है, करके काम दिखाओ, तुम वैदिक धर्म निभाओ।।8।।

-पं. नन्द लाल निर्भय सिद्धान्ताचार्य

निराकार ब्रह्म की उपासना कैसे करें ?

ले०-स्वामी वेदानन्द सरस्वती

इस शंका का समाधान हमें वेदों में ही मिलता हैं। इसको पढ़िये और मनन कीजिये।

ओ३म् तं यज्ञं बर्हिषि प्रौक्षन् पुरुषं जातमग्रतः।

तेन देवा अयजन्त साध्या ऋषयश्च ये।।(यजु. 31.9)

अर्थात्-(तम्) उस (यज्ञम्) पूजनीय (पुरुषम्) परमेश्वर को जो (अग्रतः जातम्) सृष्टि के पूर्व से ही विराजमान है तथा (ये) जो (देवाः) ज्ञानी (साध्याः) साधक (च) और (ऋषयः) ऋषिजन थे (तेन) उन्होंने (बर्हिषि) मानव ज्ञानयज्ञ में (प्रौक्षन्) सींचकर अर्थात् धारण करके (अजयन्त) उसकी पूजा की।

भावार्थ-ज्ञानी, साधक और ऋषिगण सभी उस परमात्मा का अपने अन्तर-हृदय में ध्यान करते हैं। ज्ञान स्वरूप उस परमात्मा की आज्ञानुसार अपने आचरण को पवित्र बनाते हैं। उस परमात्मा की आज्ञा का पालन करना ही उसकी पूजा है।

वह परमात्मा ज्ञानस्वरुप है। मानव मात्र के कल्याण के लिये वह अपने ज्ञान का वेदों के रूप में श्रद्धालु भक्तों के हृदय में प्रकाश करता है।

तस्मात् यज्ञात्सर्वहुत ऋचः सामानि जज्ञिरे।

छन्दांसि जज्ञिरे तस्मात् यजुस्तस्मादजायत।।

(यजु. 31.7)

अर्थात्-उस (सर्वहुतः यज्ञात्) सब का कल्याण करने वाले पूजनीय परमेश्वर से ही ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद की उत्पत्ति होती है। वही ज्ञान, विज्ञान, कर्म और उपासना का प्रकाशक है। ज्ञानहीन, अज्ञानी व्यक्ति न ही सत्कर्म कर सकता है और न उपासना कर सकता है। कर्म और उपासना से पूर्व ज्ञान की उपलब्धि अनिवार्य है। ज्ञान की उपलब्धि ध्यान से और वेदों के स्वाध्याय से ही होती है।

देश-देशान्तरों के लोग गंगा, यमुना, गोदावरी आदि नदियों के उद्गम स्थलों की खोज में निकलते हैं। वे उन जलस्त्रोतों को देखकर प्रफुल्लित होते हैं। किन्तु ज्ञान गंगा का उद्गम स्थल कहां है ? यह जिज्ञासा विरले लोगों के दिलों में ही पैदा होती है। जब इस विषय पर विचार किया जाता है तो इस ज्ञानगंगा का उद्गम स्थल मस्तिष्क में ही मिलता है। संसार के ज्ञानी हों या अज्ञानी, सभी लोग सोचने-विचारने का काम मस्तिष्क से ही लेते हैं। किन्तु मस्तिष्क तो शरीर में एक मांस का ही पिण्ड है। उसमें ज्ञान कहां से आयेगा ? ज्ञान तो चेतन का गुण-धर्म है।

इस शंका का समाधान भी वेदों से ही होता है। अथर्ववेद का मन्त्र है-

तस्मिन् हिरण्यमये कोषे त्र्यरे त्रिप्रतिष्ठिते।

तस्मिन् यद् यक्षमात्मन्वत् तद्वै ब्रह्मविदो विदुः।। (अथर्व. 10.2.31)

अर्थात्-उस हिरण्यमय कोष में जो तीन अरों के ऊपर अवस्थित है उसी में पूजनीय जीवात्मा का निवास है। उसके अस्तित्व का ज्ञान ब्रह्मविद् व्यक्ति को ही होता है। सामान्यजन अपनी आत्मविस्मृति में ही जीवन जीते हैं। यह अज्ञानता ही जीवात्मा को जन्म-मरण के चक्र में डाले रखती है। योगाभ्यास के द्वारा जब जीवात्मा को अपने स्वरुप का ज्ञान हो जाता है, तो वह जन्म-मरण के इस चक्र से बाहर हो जाता है।

ज्ञान चेतन का ही गुण होता है। जड़ पदार्थों में ज्ञान नहीं होता। आत्मा और परमात्मा दोनों चेतन हैं। दोनों का ही यह ज्ञान गुण है। उनमें भेद केवल यह है कि जीवात्मा एकदेशी है, तो परमात्मा सर्वव्यापक है। जीवात्मा व्याप्य है, तो परमात्मा सर्वव्यापक है। मस्तिष्क की हृदय गुहा में जो जीवात्मा विराजमान है उसमें सर्वज्ञ, सर्वव्यापक परमात्मा का भी आवास है। वहीं से यह ज्ञान गंगा निःसृत हो रही है। जो व्यक्ति जितना एकाग्रचित्त होकर उस परमात्मा की भक्ति में निमग्न होता है, वह उतना ही अधिकाधिक ज्ञान ज्योति से प्रकाशित हो उठता है। परमात्मा अपने ज्ञान को पहाड़-पत्थरों में यूं ही नहीं फेंक देता। वह उस ज्ञानरुपी अनमोल धन को सत्पात्रों को ही प्रदान करता है। योगनिष्ठ तपस्वी आत्मा ही उस ज्ञान को प्राप्त करती है। ज्ञान सम्पन्न होकर जीवात्मा अपने मन, बुद्धि, शरीर, इन्द्रियों के द्वारा उस ज्ञान को कर्म रुप में अवतरित करता है। उत्तम ज्ञान से उत्तम कर्म निष्पन्न होते हैं। जब ज्ञान और कर्म ये दोनों ही व्यक्ति के पवित्रतम हो जाते हैं, तो व्यक्ति का सम्पूर्ण जीवन ही यज्ञमय हो जाता है। ज्ञान ज्योति के प्रकाश में जीवात्मा अपने स्वरुप का प्रत्यक्ष करता है तथा शरीर, मन, बुद्धि से जो कर्म करता है, वे सब निष्काम भाव से ही पूरे करता है। निष्काम कर्म बन्धन का कारण नहीं होता। याज्ञिक भावना से किये गये निष्काम कर्म ईश्वर की पूजा में समर्पित कर दिये जाते हैं, तो यही ईश्वर उपासना का सर्वोत्तम रुप है।

यजुर्वेद का मन्त्र इसी उपासना पर प्रकाश डाल रहा है-

यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्।

ते ह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः।।(यजु. 31.16)

अर्थात्-(देवाः) ज्ञानी विद्वान् लोग (यज्ञेन) अपने जीवन यज्ञ से (यज्ञम्) उस पूजनीय यज्ञस्वरुप परमात्मा की (अयजन्त) पूजा करते हैं। उसकी पूजा के (तानि धर्माणि) वे धर्म-कृत्य ही (प्रथमानि) प्रधानतम साधन (आसन्) है। उसी पूजा से (पूर्वे) पूर्वकाल के (साध्याः) साधक लोग और (देवाः) ज्ञानी विद्वान् लोग (यत्र) जहां अमृत सुख भोगते हुए (सन्ति) विराजमान है, वहीं अपने जीवन को यज्ञमय बनाने वाले धीर पुरुष भी (महिमानः) महानता को प्राप्त करते हुए (ते) वे भी (ह) निश्चय से (नाकम्) मोक्ष के आनन्द को (सचन्त) प्राप्त करते हैं। यज्ञ ही ईश्वर पूजा का श्रेष्ठतम उपाय है। यह यज्ञ क्या है ? इसको वेद के शब्दों में सुनिये-

व्रतेन दीक्षामाप्नोति दीक्षयाप्नोति दक्षिणाम्।

दक्षिणया श्रद्धामाप्नोति श्रद्धया सत्यमाप्यते।।

एतावद्रूपं यज्ञस्य यद्देवैर्ब्रह्मणा कृतम्।

तदेतत्सर्वमाप्नोति यज्ञे सौत्रामण सुते।। यजु. 19.31

भावार्थ-परमात्मा सत्य स्वरुप है। उस सत्य स्वरुप परमात्मा का साक्षात्कार करना साधक व्यक्ति का जीवन लक्ष्य होता है। इस जीवन लक्ष्य को पाने के लिये साधक व्यक्ति को चार सीढ़ियां पार करनी पड़ती हैं। उनमें प्रथम सीढ़ी है, सत्य की प्राप्ति और अमृत के त्याग का व्रत लेना। ऐसी प्रतिज्ञा करना कि मरूँ चाहे जीऊं, सत्य को प्राप्त करके ही रहूंगा। यह प्रतिज्ञा ही अहिंसा, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह, शौच, सन्तोष, तप, स्वाध्याय, ईश्वर-प्रणिधान का पूर्णरूपेण पालन करना, माता-पिता, गुरु, अतिथि, विद्वत्जनों की सेवा-शुश्रूषा. यह सब दीक्षा रूप है। इनका पालन करने वाले व्यक्ति की शारीरिक, मानसिक, आत्मिक उन्नति होती है। जन समाज की सेवा का भी वह पात्र बन जाता है। यही उसकी दक्षिणा है। इस दक्षिणा को पाकर उसके मन में सत्य धर्म के प्रति और श्रद्धा बढ़ जाती है। अन्ततः वह श्रद्धा सत्य स्वरूप परमात्मा की प्राप्ति का साधन बन जाती है। जिस जीवन में व्रत, दीक्षा, दक्षिणा, श्रद्धा और सत्य अवतरित हो जाते हैं, वह जीवन यज्ञमय हो जाता है। यही जीवन यज्ञ का वास्तविक स्वरूप है। इसी में जीवन की सार्थकता है। यही ईश्वर पूजा का सर्वोत्तम उपाय है। दूसरे सब उपाय व्यक्ति को भटकाने वाले हैं। उत्तम ज्ञान व उत्तम कर्म सब प्रभु चरणों में अर्पित कर देना ही उसकी सेवा है। यह यज्ञरूप प्रभु की जीवनयज्ञ द्वारा पूजा का सर्वोत्तम उपाय है। यही उस निराकार ईश्वरोपासना का वैदिक उपाय है।

वेदों में न्याय तथा दण्ड व्यवस्था

ले०-शिवनारायण उपाध्याय, 73 शास्त्री नगर दादाबाड़ी, कोटा

गतांक से आगे

'उसके दोनों पैरों को सर्वथा तोड़ डाले। जिससे वह चल न सके। उसके दोनों हाथों को भी सर्वथा तोड़ डाले जिससे वह भोजन भी न कर सके। जो मलिन आचरण करने वाला लुटेरा पास आवे। वह निकल जावे, वह सर्वथा निकल जावे अर्थात् वह राष्ट्र से निकाल दिया जावे। सूखे स्थान में निकल जावे अर्थात् उसे रेगिस्तान में छोड़ दिया जावे।'

'जो मनुष्य सर्प और भेड़िये आदि के समान रात्रि में आकर दुःख देवे तो सांप के सिर के समान उसके सिर को काट कर फेंक दे अथवा भेड़िये की दोनों आंखें निकाल कर फेंक दे। उसे काठ के बन्धन में मार डाले।'

भोजन सामग्री, दूध, घी, तेल, मसाले आदि में मिलावट करने वालों को कड़ा दण्ड दिये जाने का प्रावधान भी वेद में दिया गया है। वेद में कहा गया है, 'जिस पिशाच समूह ने कच्चे, अच्छे पके, चितकबरे, अथवा विविध प्रकार पके हुए भोजन में मुझे धोखा दिया उससे वे मांस भक्षक अपने शरीर और प्रजा के साथ विविध प्रकार की पीड़ा पावे और यह पुरूष नीरोग हो जावे।'

फिर आगे कहा गया है, 'जिस किसी ने दूध में अथवा मट्ठे में अथवा जिसने बिना जुते हुए खेत से उत्पन्न हुए भोजन में अथवा यव आदि अन्न में मुझे धोखा दिया है उससे वे मांस भक्षक अपने जीवन और प्रजा के साथ विविध प्रकार से पीड़ा पावे और यह पुरूष नीरोग हो जावे।'

'जो घोड़ों अथवा गायों को मारकर उनका मांस खावे उसे भी दण्ड मिले जो कोई दुःख दायी जीव पुरूष वध से प्राप्त मांस से, जो घोड़े के मांस से, और पशुन से अपने को पुष्ट करता है और जो नहीं मारने योग्य गाय को दूध को नष्ट करता है। हे अग्नि स्वरूप तेजस्वी राजन्। उसके सिर को अपने बल से काट डाल।'

सरकारी काम में बाधा डालने वालों के लिए वेद में कहा गया है, 'जो दुष्ट शीघ्रगामी पुरूषार्थी पुरूषों के साथ वर्तमान दृढ़ स्तुति वाले पुरूष को विशेष करके नष्ट करते हैं अथवा आत्म धारणाओं के साथ रहने वाले कल्याण को दूषित करते हैं। ऐश्वर्यवान् राजा अवश्य उन्हें सर्प सामान क्रूर पुरूष को प्रदान कर देवे अथवा अलक्ष्मी की गोद में रख दे। अर्थात् ऐसे पुरूष को कैद कर लेवे तथा उसकी सम्पत्ति को जब्त कर लेवे।'

'बड़े डाकुओं को पकड़कर एकान्त कैद में सब प्रकार की सुख सुविधाओं से रखे और समय आने पर युद्ध में अथवा अपराधियों को पकड़ने में उनसे सहयोग ले। वेद में कहा गया है, 'हम लोग अग्नि के समान तेजस्वी राजा के साथ मिलकर तेज स्वभाव वालों को जीतने की इच्छा करते हैं तथा शीघ्र ही दूसरों के पदार्थों को हरण करने वाले, दूसरे का धन हड़पने के लिए यत्न करते हुए डाकू पुरूष को दूसरे देश से युद्ध के लिए बुलावें। वह डाकू के तिरस्कार करने योग्य बल को बड़े-बड़े रमण के साधन वाले हिंसक दुष्ट पुरूष को यहां कैद में रखें।'

'अपराधी चाहे आर्य हो अथवा अनार्य उसे दण्डित अवश्य किया जाना चाहिए। इस विषय में वेद में कहा गया है, 'हे राजन्। मारने की इच्छा करने वाले, अभिद्रोह करने वालों के शस्त्र को अन्तर्हित कर दो। हे धनों के स्वामी। दस्युका हो आर्य का हो उसके आयुध को अन्तर्हित पृथक कर दो।'

सरकारी तथा जनता की सम्पत्ति की तोड़ फोड़ करने वालों को भी दण्ड मिले। 'हे तेजस्वी राजन्। तोड़ फोड़ करने वाले प्रजा पीड़क राक्षक को तीक्ष्ण विष से जला दो। अपने तीव्र शस्त्र से तपे हुए अग्रगामी शस्त्रों से उसे जला दो।'

वाणिज्य आदि व्यवसायों में कुटिल पुरूषों को दण्ड देना अत्यन्त आवश्यक है, यदि ऐसा नहीं किया गया तो व्यापार चौपट हो जावेगा। 'हे ऋषि' आप राजा और मंत्रीमण्डल के सदस्यों को अच्छी प्रकार प्रकाशित कीजिए। वे आपकी प्रार्थना को अनेक बार सुनेंगे। कुटिल पुरूष को दण्ड देकर दूर रखेंगे।

स्वामी दयानन्द सरस्वती का मानना यह है कि अपराध करने पर राजा-रानी को भी दण्ड दिया जाना चाहिए। जब उनसे प्रश्न किया गया कि राजा अथवा रानी को उनके अपराध का दण्ड कौन दे सकेगा? तब उन्होंने उत्तर दिया कि राजा भी एक पुण्यात्मा भाग्यशाली मनुष्य है। जब उस को दण्ड नहीं दिया जाए और वह दण्ड ग्रहण न करे तो दूसरे मनुष्य दण्ड को क्यों ग्रहण करेंगे? और जब सब प्रजा और प्रधान राज्याधिकारी और सभा धार्मिकता से दण्ड देना चाहे तो अकेला राजा क्या कर सकता है? जो ऐसी व्यवस्था न हो तो राजा, प्रधान और सब पुरूष अन्याय में डूब कर न्याय धर्म को डुबो कर सब प्रजा का नाश कर आप भी नष्ट हो जावें।

अब हम वेद में दण्ड की कठोरता के विषय में चर्चा कर विषय को समाप्त करेंगे। स्वामी दयानन्द सरस्वती से पूछा गया है कि यह कड़ा दण्ड होना उचित नहीं है क्योंकि मनुष्य किसी को बनाने वाला या जलाने वाला नहीं है इसलिए ऐसा दण्ड नहीं देना चाहिये? उत्तर-जो इसको कड़ा दण्ड जानते हैं वे राजनीति को नहीं समझते। क्योंकि एक पुरूष को ऐसा दण्ड देने से सब लोग बुरे काम से दूर रहेंगे और बुरे काम को छोड़कर धर्म मार्ग में स्थित रहेंगे। सब पूछो तो यही है कि एक राई भर भी यह दण्ड सब के भाग में न आयेगा। और जो सुगम दण्ड दिया जाये तो दुष्ट काम बहुत बढ़कर होने लगेंगे। वह जिसको तुम सुगम दण्ड कहते हो वह करोड़ों गुणा अधिक होने से करोड़ों गुणा अधिक होता है। क्योंकि सब मनुष्य दुष्ट कर्म करेंगे तो थोड़ा थोड़ा दण्ड भी देना पड़ेगा। वास्तव में स्वामी जी का यह सोच वर्तमान में भारत में स्पष्ट दिखाई दे रहा है। दण्ड न मिलने से अथवा बीसों वर्षों में भी दण्ड का निपटारा न होने से भारत संसार का सबसे भ्रष्टतम देश बन गया है।

योग-ध्यान, साधना शिविर

जम्मू कश्मीर की सुरम्य एवं मनोरम पहाड़ियों में स्थित आनन्दधाम आश्रम गढ़ी आश्रम उधमपुर, जम्मू कश्मीर में आश्रम के मुख्य संरक्षक एवं निदेशक पूज्य महात्मा चैतन्यस्वामी जी की अध्यक्षता एवं पूज्य मां सत्यप्रियायति जी के सान्निध्य में दिनांक १६ से २३ सितम्बर-२०१८ तक निःशुल्क योग-ध्यान-साधना शिविर का आयोजन किया जा रहा है। जिसमें अनुभवी आचार्यों एवं महात्माओं द्वारा उपासना, प्राणायाम, योगासन आदि का क्रियात्मक अभ्यास कराया जाएगा। इस अवसर पर वैदिक प्रवचन तथा योगदर्शन एवं उपनिषदादि पर भी व्याख्यान होंगे। शिविर में स्वामी वेदपति जी, वैदिक प्रवक्ता श्री अखिलेश भारतीय जी, स्वामी नित्यानन्द जी आदि अन्य अनेक विद्वान् भी पधार रहे हैं। इस अवसर पर पूज्य चैतन्यस्वामी जी के ब्रह्मत्व में प्रतिवर्ष की भान्ति सामवेद पारायण-यज्ञ का आयोजन भी किया जा रहा है। शिविर में साधक अपनी शंकाओं का समाधान भी कर सकेंगे। आश्रम में पूज्य स्वामी जी के सान्निध्य में पहले लगाए गए शिविरों में शिविरार्थियों के बहुत अच्छे अनुभव रहे हैं इसलिए साधकों की संख्या निरन्तर बढ़ती जा रही है अतः इच्छुक साधक अपना स्थान आरक्षित करने के लिए फोन नं. ०९४१९१०७७८८, ०९४१९७९६९४९ व ०९४१९१९८४५२ पर तुरन्त सम्पर्क करें।

-भारतभूषण आनन्द, आश्रम प्रधान

आर्य मर्यादा के ग्राहक महानुभावों की सेवा में

आर्य मर्यादा साप्ताहिक निरन्तर आपकी सेवा में पहुंच रही है। जिन आर्य मर्यादा के ग्राहकों ने अभी तक अपना वार्षिक शुल्क या पिछला शुल्क नहीं भेजा है उनसे विनम्र प्रार्थना है कि वह अपना वार्षिक शुल्क जल्द से जल्द भिजवाने की व्यवस्था करें। आर्य मर्यादा का वार्षिक शुल्क मात्र 100/- रुपये है और आजीवन सदस्यता शुल्क 1000/- रुपये है। इसलिये मेरी सभी ग्राहक महानुभावों से प्रार्थना है कि वह अपना शुल्क जल्द से जल्द भिजवाने की व्यवस्था करें। इसके साथ ही आर्य समाजों के पदाधिकारियों एवं सदस्यों से भी निवेदन है कि वह अधिक से अधिक आर्य मर्यादा के ग्राहक बनाने में सहयोग करें। आशा है आप का सहयोग हमें प्राप्त होगा।

-व्यवस्थापक आर्य मर्यादा

महर्षि दयानन्द सरस्वती सम्बन्धित प्रश्नोत्तरी

श्री सुरेन्द्र मोहन तेजपाल अधिष्ठाता साहित्य विभाग द्वारा प्रसिद्ध विद्वानों के सहयोग से तैयार प्रश्नोत्तरी। आशा है आर्य मर्यादा के पाठक इससे लाभान्वित होंगे।

गतांक से आगे

प्र.81-गुरू विरजानन्द का अगला प्रश्न क्या था?
उत्तर-क्या पढ़े हो।
प्र.82-स्वामी दयानन्द का उत्तर क्या था?
उत्तर-सारस्वत आदि व्याकरण और अनेकों ग्रन्थ।
प्र.83-गुरू विरजानन्द ने स्वामी दयानन्द को क्या आदेश दिया?
उत्तर-कि समस्त ग्रन्थों को नदी में प्रवाहित कर दो।
प्र.84-स्वामी दयानन्द ने कितने वर्षों तक गुरू विरजानन्द से शिक्षा ग्रहण की?
उत्तर-ढाई वर्ष तक।
प्र.85-गुरू दक्षिणा के रूप में दयानन्द गुरू विरजानन्द के लिए क्या लाया?
उत्तर-कुछ लौंग मांगकर।
प्र.86-क्या विरजानन्द ने वह लौंग ले लिए?
उत्तर-नहीं।
प्र.87-गुरू विरजानन्द ने लौंग क्यों नहीं लिए?
उत्तर-क्योंकि वे अपने शिष्य दयानन्द से कुछ और चाहते थे।
प्र.88-गुरू विरजानन्द ने स्वामी दयानन्द से क्या मांगा?
उत्तर-दयानन्द का सम्पूर्ण जीवन।
प्र.89-गुरू विरजानन्द ने स्वामी दयानन्द से उनका जीवन किसलिए मांगा?
उत्तर-वैदिक धर्म के प्रचार हेतू।
प्र.90-क्या स्वामी दयानन्द ने गुरू विरजानन्द के आदेश को स्वीकार किया?
उत्तर- हां स्वीकार किया।
प्र.91-मथुरा से स्वामी दयानन्द कहां गए?
उत्तर-हरिद्वार कुम्भ के मेले में।
प्र.92-कुम्भ के मेले में स्वामी दयानन्द ने क्या किया?
उत्तर-पाखण्ड़ खण्डि़नी पताका फहराई।
प्र.93-स्वामी दयानन्द ने पाखण्ड खण्डिनी पताका कब फहराई?
उत्तर-चैत्र सम्वत् १९२४ में।
प्र.94-हरिद्वार के किस स्थान पर पाखण्ड खण्डिनी पताका फहराई?
उत्तर-भीम गोड़े के ऊपर सप्त स्त्रोत पर।
प्र.95-पाखण्ड़ खण्डि़नी पताका फहरा कर स्वामी दयानन्द ने क्या उपदेश दिया?
उत्तर-पाखण्ड का खण्डन और सत्य धर्म का प्रचार।
प्र.96-स्वामी दयानन्द जी का काशी आदि भारतवर्ष के प्रत्येक नगरों के घूमने का क्या कारण था?
उत्तर-ताकि जहां भी पाखण्ड दिखाई दे उसे समाप्त किया जा सके।
प्र.97-महर्षि दयानन्द ने कुरीतियों से लड़ने के लिए किस संस्था की स्थापना की?
उत्तर-आर्य समाज ।
प्र.98-आर्य समाज की स्थापना कब हुई?
उत्तर-सन् 1875 ई.में।
प्र.99-महर्षि दयानन्द पंजाब में सर्वप्रथम कहां आए?
उत्तर-लुधियाना में।
प्र.100-आर्य समाज की स्थापना कहां हुई?
उत्तर-मुम्बई में।

श्री राधे श्याम मेहरा नहीं रहे

06.07.2018 की रात्रि अमृतसर के प्रसिद्ध व्यवसायी एवम् आर्य समाज शक्ति नगर अमृतसर के मंत्री श्री राकेश मेहरा के पूज्य पिता श्री राधे श्याम मेहरा जी का स्वर्गवास हो गया था। उसकी अन्त्येष्ठि क्रिया 07.07.2018 को पूर्ण वैदिक रीति से अमृतसर के समस्त आर्य विद्वानों ने वेद मंत्रोच्चारण करते हुए शिव पुरी शमशान घाट अमृतसर में उनके ज्येष्ठ पुत्र श्री राकेश मेहरा और उनके परिवार के अन्य सदस्यों द्वारा करवाई। श्री राधे श्याम मेहरा जी जहाँ एक कुशल व्यवसायी थे। वहाँ आर्य समाज शक्ति नगर से जुड़े हुए थे। आप दयानंद फ्री हस्पताल, स्वतन्त्रतानन्द पुस्तकालय इत्यादि अनेक संस्थाओं से सम्बन्धित रहे। उन्होंने सारा जीवन सादगी और उच्च आदर्शों का पालन करते हुए व्यतीत किया। श्री राधे श्याम जी ने अपने पिता स्व: महाशय जगदीश राज जी द्वारा प्रेरित होकर आर्य समाज के आन्दोलन से आजीवन जुड़े रहे। अपने ज्येष्ठ पुत्र श्री राकेश मेहरा को भी इस कार्य को आगे बढ़ाने के लिए प्रेरित किया।

उनकी स्मृति में श्रद्धाजंलि और अंतिम शोक सभा दिनांक 09.07.2018 को आर्य समाज लारेंस रोड, अमृतसर में हुई। जिसमें अमृतसर के आर्य जगत के प्रसिद्ध विद्वान, आर्य नेता आदि उपस्थित हुए। आर्य समाज का हाल और प्रांगण सांत्वना देने वालों से भरा हुआ था। विशेष रूप से स्वामी सदानंद जी अध्यक्ष दयानन्द मठ दीनानगर परिवार को आशीर्वाद देने पहुँचे। नगर के गणमान्य व्यक्तियों के अतिरिक्त अमृतसर की समस्त आर्य समाजों के अधिकारी, सदस्य एवम डी.ए.वी. के प्रमुख श्री राकेश मेहरा जो कि अमृतसर की अनेक शिक्षण संस्थाओं से जुड़े हुए है, को सांत्वना देने पहुँचे। प्रिं. श्री जे.पी. शूर जी ने विशेष रूप से दिल्ली से फोन करके राकेश मेहरा को संवेदना प्रकट कर सांत्वना दी। प्रिं० डॉ० नीलम कामरा प्रिं० श्री राजेश कुमार, प्रिं० डा० नीरा शर्मा, प्रिं० श्री अजय बेरी, प्रिं० परमजीत कुमार, प्रिं० अंजना गुप्ता, प्रिं० अनीता मेनन एवम पूर्व डिप्टी स्पीकर पंजाब प्रो० दरबारी लाल जी उपस्थित थे। परम पिता परमात्मा दिवंगत आत्मा को शान्ति व सद्गति प्रदान करे।

प्र.101-महर्षि दयानन्द लुधियाना कब आए?
उत्तर-बैसाख बदी८ सम्वत् १८२४ को।
प्र.102-लुधियाना में महर्षि दयानन्द का उपदेश कहां हुआ?
उत्तर-श्रीयुत् जटमल खजानची के आवास पर।
प्र.103-विक्रमसिंह जी के निवास जालन्धर में महर्षि दयानन्द कब आए?
उत्तर-भादो सुदि ६सम्वत् १८२४ में।
प्र.104-स्वामी दयानन्द कितना समय पंजाब प्रान्त में रहे?
उत्तर-लगभग डेढ़ वर्ष तक।
प्र.105-स्वामी दयानन्द ने विक्रम सिंह को ब्रह्मचर्य का क्या करिश्मा दिखाया?
उत्तर- एक हाथ से दो घोड़ों की बग्घी रोककर।
प्र.106-महर्षि दयानन्द की अमर कृति क्या है?
उत्तर-अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश।
प्र.107-महर्षि दयानन्द का निर्वाण कब हुआ?
उत्तर-30 अक्तूबर 1883 में ।
प्र.108- महर्षि दयानन्द का निर्वाण कैसे हुआ?
उत्तर- दूध में जहर पिलाने से।
प्र.109-महर्षि दयानन्द के रसोईये ने किसके कहने पर महर्षि को विष दिया?
उत्तर-नन्हीं जान नामक वेश्या के ।
प्र.110-महर्षि दयानन्द ने रसोईए के साथ क्या व्यवहार किया?
उत्तर- पैसे देकर नेपाल भाग जाने को कहा।
प्र.111-महर्षि दयानन्द का निर्वाण कहाँ हुआ?
उत्तर-अजमेर में।
प्र.112-महर्षि दयानन्द ने कितने ग्रन्थों की रचना की?
उत्तर- लगभग 36
प्र.113-मानव निर्माण के लिए महर्षि दयानन्द ने कौन सा ग्रन्थ लिखा?
उत्तर-संस्कार विधि।

ईश्वर की उपासना भय से नहीं भाव से करनी चाहिए

ले०- पं० खुशहाल चन्द्र आर्य C/o गोबिन्द राय आर्य एण्ड सन्ज १८० महात्मा गान्धी रोड़, (दो तल्ला) कोलकात्ता

हम पौराणिक धर्म भीरू भाईयों को देखते हैं कि वे अपने आराध्य देव, चाहे वह राम हो, कृष्ण हो, महादेव हो, गणेश हो, हनुमान जी हो या चाहे माता दुर्गा हो या काली हो सभी की पूजा या उपासना भाव से नहीं करते बल्कि भय से करते हैं। वे डरते रहते हैं कि कहीं मेरी थोड़ी सी भी भूल हो गई तो मेरा देवता मुझ से नाराज न हो जाये और कोई अनिष्ट करेगी, फिर भी वह डरता रहता है। उनके मन में सदैव यह भय बना रहता है कि यदि मैंने राम की पूजा अधिक कर ली तो कहीं दूसरे देवता कृष्ण, शिव, गणेश, विष्णु आदि तो नाराज न हो जावें और यदि "गणेश" की पूजा अधिक कर ली तो कहीं दूसरे देवी-देवता तो नाराज न हो जावें, इस भय से वह बहुत सम्भल-सम्भल कर सभी देवी-देवताओं की पूजा बराबर-बराबर करता है। यदि भूल से किसी देवता की आरती कुछ समय अधिक कर दी तो औरों की भी उतनी ही अधिक समय तक करेगा ताकि किसी देवता को भी कोई शिकायत न रहे। वह सदैव देवी-देवताओं की शिकायतों से ही डरता रहता है, भाव से पूजा करने का तो उसे ध्यान ही नहीं रहता। यह उम्र भर इन्हीं देवी-देवताओं को खुश करने के चक्कर में ही पड़ा रहता है। वह गण्ड़े डोरी, ताबीज भी बान्धता रहता है, ताकि देवता लोग खुश रहें। वह न तो सही ईश्वर को जान पाता है और न ही सही पूजा व उपासना को जान पाता है। ईश्वर की भक्ति भाव से होती है न कि भय से। भक्त के भाव यदि अच्छे हैं तो पद्धति चाहे कैसी भी हो उसको उसी भक्ति, पूजा या उपासना में आनन्द मिलेगा, ईश्वर भावों को देखता है, पद्धति को नहीं।

वैदिक धर्म में ईश्वर की भक्ति या उपासना भाव से की जाती है। वैदिक धर्म केवल एक ईश्वर जो पूरी सृष्टि को रचने वाला, पालन करने वाला व संहार करने वाला है, साथ ही जीवों को उनके कर्मानुसार फल देने वाला है, उस एक सर्वशक्तिमान, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, न्यायकारी, सर्वज्ञ है, उसी की उपासना भाव से करना सिखाता है। महाभारत तक केवल एक ही धर्म, वैदिक धर्म ही चला आ रहा था परन्तु महाभारत के भीषण युद्ध में भारत के अधिकतर विद्वान योद्धा, आचार्य व धर्मोपदेशक समाप्त हो जाने से स्वार्थी, अनपढ़ व अधकचरे विद्वानों व ब्राह्मणों के ऊपर धर्म चलाने का भार आ गया। उन स्वार्थी लोगों ने अपनी स्वार्थ पूर्ति के लिए ईश्वर के जो गुण और कार्य है, उनके आधार पर अनेक देवी-देवता बना दिए। जैसे ईश्वर, सृष्टि की उत्पत्ति करता है तो उसका नाम ब्रह्मा रख दिया। ईश्वर सृष्टि का पालन करता है तो उसका नाम विष्णु रख दिया और ईश्वर सृष्टि की अवधि चार अरब बतीस करोड़ वर्ष पूरे होने पर सृष्टि का विनाश या संहार करता है तो उसका नाम शिव रख दिया। इसी प्रकार विद्या की देवी सरस्वती तथा धन की देवी का नाम लक्ष्मी रख दिया, परन्तु यह सब नाम उस परमपिता परमात्मा के ही है। उसी के कार्यों व गुणों के अलग-अलग नाम रख दिये है। इसी से लोग सच्चे ईश्वर को भूल गये और अनेक देवी-देवताओं के चक्कर में पड़ गये। जिससे मानव का बड़ा पतन हुआ है।

इन देवी-देवताओं के मनुष्य की भाँति खुश करने के लिए तरह-तरह के तरीकों से प्रलोभन व रिश्वत भी देने लग गये। जैसे हे! काली माता, मेरा यह काम पूरा कर होगी तो मैं तुमको एक बकरा भेंट चढ़ा दूँगा। ब्राह्मणों ने भी मनुष्य की इस कमजोरी का लाभ उठाया। उन्होंने भी मूर्त्ति पूजा, अवतारवाद, ग्रह-चक्र, भाग्य-दुर्भाग्य, शकुन-अपशकुन, वरदान-शाप, फलित ज्योतिष, हस्त रेखा देखना आदि अनेक प्रकार के अन्धविश्वास व पाखण्ड फैला कर और अनेक प्रकार के मत्त-मतान्तर चला कर लोगों को भ्रमित करके काफी ठगा और लोगों को उनके सच्चे मार्ग से भटका दिया, इससे मानव जाति का बड़ा ह्रास हुआ है। ईश्वर के नाम पर अनेक देवी-देवताओं को मानना मनुष्य की भूल व गलती ही कहलाई जायेगी।

ईश्वर केवल एक ही है। वही उत्पत्ति कर्त्ता, वही पालन-कर्त्ता, वही संहारकर्त्ता साथ ही वही मनुष्यों के अच्छे-बुरे कर्मों का फल, अच्छे कर्म का फल सुख के रूप में और बुरे कर्म का फल दुःख के रूप में देने वाला है। उसी की उपासना करनी चाहिए।

जो व्यक्ति जीवन भर निष्काम कर्म करता है यानि जो कुछ भी कार्य करता है। उसके पीछे उसका उद्देश्य परोपकार करना है। अपने स्वार्थ के लिए वह कोई काम नहीं करता। वह भोजन करता है तो भी यही सोच कर करता कि भोजन करके मैं जीवित रह सकूँगा और देश व मानवता का काम करता रहूँगा। ऐसे व्यक्ति को ही मोक्ष प्राप्त होता है। महाभारत से लेकर अभी तक इन पाँच हजार वर्षों में केवल दो ही महापुरुष ऐसे हुए है। जिनका पूरा जीवन परोपकार करने में ही बीता है। वे हैं, पहले भगवान श्री कृष्ण दूसरे हैं महर्षि देव दयानन्द जिनको महर्षि की भाषा में आप्त पुरुष कहते हैं।

(क्रमशः)

वेदवाणी

उत्तम गुण मुझमें आएँ

यज्ञस्य चक्षुः प्रभृतिर्मुखं च वाचा श्रोत्रेण मनसा जुहोमि।
इमं यज्ञं विततं विश्वकर्मणा देवा यन्तु सुमनस्यमानाः।।

-ऋ. २।३५।५

ऋषिः-अङ्गिराः।। देवता-विश्वकर्मा।। छन्दः-भुरिक्त्रिष्टुप्।।

विनय-मेरे जीवन-यज्ञ का भरण-पोषण करने वाली मेरी दर्शनशक्ति है। इससे नित्य नया सत्यज्ञान पाता हुआ मेरा मनुष्य-जीवन उन्नत-से-उन्नत होता जा रहा है। इस यज्ञ का साधनभूत जो मेरा स्थूल शरीर है, उसका भरण-पोषण मुँह द्वारा अन्न ग्रहण करने से हो रहा है, पर मेरा यह सब मानसिक और शारीरिक पोषण यज्ञ के लिए ही है। मैं उन्नत हुए मन से, शरीर से, इन्द्रियों से जो कुछ करता हूँ वह सब हवन ही करता हूँ। वाणी से जो बोलता हूँ वह हवन ही करता हूँ; ऐसा कुछ नहीं बोलता जो प्रभु को साक्षी रखकर नहीं होता, जोकि अन्यों का हितकर नहीं होता। कानों से जो सुनता हूँ वह प्रभु-अर्पण-बुद्धि से सुनता हूँ; वह श्रेष्ठ पवित्र ही श्रवण करता हूँ, जो फलतः सर्वभूतहित के लिए हो। इसी प्रकार मन के भी एक-एक मनन-चिन्तन को ऐसा पवित्र, निर्विकार, हवनरूप करने का यत्न करता हूँ। मैं सदा स्मरण रखता हूँ कि यह मनुष्य-जीवन मुझे विश्वकर्मा प्रभु ने यज्ञरूप करके दिया है। मुझे यह ध्यान रहता है कि यह जीवन-यज्ञ उस प्रभु का आरम्भ किया हुआ, चलाया हुआ है। जिस यज्ञस्वरूप ने यह सब विश्व-ब्रह्माण्ड रचा है, उसी विश्वकर्मा ने अपने इस विश्व में मेरा यह छोटा-सा जीवनयज्ञ भी शतवर्ष तक चलने के लिए प्रारम्भ किया है। यही विचार है जो मुझे अपने एक-एक कर्म को संयमपूर्ण, पवित्र और त्यागमय बनाने को प्रेरित करता है। मैं सचिन्त और सावधान रहता हूँ कि कहीं यह विश्वकर्मा का विस्तृत किया हुआ पवित्र यज्ञ मेरे किसी कर्म से कभी भ्रष्ट न हो जाए। इसलिए, हे देवो! प्रभु के संसार-यज्ञ को चलाने वाली दिव्य शक्तियो! तुम मेरे इस यज्ञ में भी प्रसन्नचित्त होकर आओ और इसे अधिक-अधिक यज्ञिय, पवित्र बनाओ। तुम्हारा तो कार्य ही यज्ञ में आना है, अतः हे दिव्य गुणो! तुम मुझमें आओ, प्रसन्नचित्त होकर आओ। मैं अपने जीवन को यज्ञ बनाता हुआ तुम्हें बुला रहता हूँ, अतः हे यज्ञप्रिय दैवभावो! तुम प्रसन्नतापूर्वक मुझमें वास करो। देवों के सब गुण, सब देवभाव, सब देवत्व मुझमें आ जाएँ, स्वभावतः मुझमें आ जाएँ, मुझमें बस जाएँ।

श्री प्रेम भारद्वाज महामन्त्री, सम्पादक, प्रकाशक, मुद्रक द्वारा गायत्री प्रिंटिग प्रैस, मण्डी रोड जालन्धर से मुद्रित होकर आर्य मर्यादा कार्यालय, गुरुदत्त भवन, चौक किशनपुरा, जालन्धर से इसकी स्वामिनी आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के लिए प्रकाशित हुआ। **E-mail: apspunjab2010@gmail.com, www.aryapratinidhisabha.org**
आर्य मर्यादा में प्रकाशित सारी लेखन सामग्री से सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं। प्रत्येक विवाद के लिए न्याय क्षेत्र जालन्धर होगा।